क़ानून का मुहाफ़िज, उसूल का पाबन्द

मलाज़ुल उलमा मौलाना सै0 हसन नक़वी

गुनाह और सवाब का क्या मेयार है? हर चीज़ को अक़्ल जिस हद तक बुरा समझे वह उसी हद तक गुनाह है और जिस हद तक अक़्ल उसको अच्छा समझे उसी हद तक उसके करने में सवाब है अक़्ल का कोई हुक्म खुदा के हुक्म के मुख़ालिफ़ नहीं हो सकता। यानी जिन चीज़ों को अक़्ल जिस हद तक अच्छा समझती है उसी हद तक उसकी अच्छाई का हुक्म अहकामे खुदा से भी मालूम होता है जिस चीज़ की बुराई अक़्ल बताती है। उसी मेयार पर ख़ुदा ने बुराई भी बताई है तो गुनाह उस काम का करना है जो अल्लाह की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ हो और सवाब हर उस काम के करने में है जो ख़ुदा की मर्ज़ी के मुताबिक़ हो।

यह कहा जा सकता है कि कुछ ऐसी चीज़ें हैं जिनको दुनिया वाले फ़ायदेमन्द और बेहतर समझते हैं लेकिन ख़ुदा के हुक्म के मुताबिक़ वह बुरी हैं और कुछ चीज़ें ऐसी हैं जिनको दुनिया वाले बुरा और नुक़सानदेह समझते हैं लेकिन ख़ुदा के हुक्म के मुताबिक़ वह अच्छी हैं?

यह तो इन्सानी चाहत और अक़्ल के हुक्म में शक का नतीजा है। बेशक बहुत सी चीज़ें जिनकी अच्छाई और बुराई तक आम लोगों की नाक़िस अक़्ल नहीं पहुँच सकी है तो ऐसी जगह अक़्ल सीधे तौर पर कोई हुक्म लगाती ही नहीं बल्कि यह कहती है कि ख़ुदा चूँकि जानने वाला और हिक्मत वाला है और उसकी तरफ़ का नुमाइन्दा, रसूल[स०], ग़लतियों से पाक है, इसलिए वह जो तालीम दे वह ज़रूर किसी बुनियाद पर है, इसलिए उसकी बात मानना वाजिब है इसके अलावा जो बात नफ़सानी चाहतों के मुताबिक़ होती है उसे ग़लत अन्देश इन्सान हुक्मे अक़्ल ख़याल करके अच्छाई या बुराई को अक़्ल का हुक्म कह देता है वरना अगर नफ़सानी एहसासात और जज़्बात से हटकर देखा जाए तो अक़्ल के नज़दीक वही काम अच्छा होगा जो अल्लाह के नज़दीक अच्छा हो और हर वह काम जो अल्लाह के नज़दीक बुरा होगा अक़्ल के नज़दीक भी बुरा होगा। मालूम हुआ कि हर काम अच्छा जब ही कहा जा सकता है जब अल्लाह के नज़दीक अच्छा हो और हर काम जब ही बुरा कहा जा सकता है जब अल्लाह के नज़दीक बुरा हो। इसे अक़्ल कभी ख़ुद समझ लेती है और कभी रसूल[स०] के बयान से, और हर उस काम पर सवाब मिलेगा जो अल्लाह को पसन्द हो और हर वह काम जो सज़ा दिलाने वाला होगा जो अल्लाह के नज़दीक बुरा हो, यानी वह काम सवाब वाला होगा जो अल्लाह की मर्ज़ी के हिसाब से हो और हर वह काम सज़ा वाला होगा जो अल्लाह की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ हो।

अब अगर क़ानून के उस मुहाफ़िज़ के किरदार पर ग़ौर किया जाए जो दाएमी और हमेशा रहने वाले क़ानून का मुहाफ़िज़ बनकर आया था तो उसका हर काम और हर बात अल्लाह की मर्ज़ी के मुताबिक़ मिलेगी। अगर ऐसे क़ानून के मुहाफ़िज़ की ज़िन्दगी का मुतालआ किया जाए तो ऐसा बेदाग़ दामन मिलेगा जिसकी मिसाल नहीं मिल सकती जिसमें कहीं हलका सा झोल और कहीं हल्की सी भी लचक नहीं दिखाई जा सकती है, चूँकि यह बात बहुत ही वसीअ है इसलिए मैं मुख़्तसर तौर पर मिसाल के तौर पर एक वाक़ेआ बयान करता हूँ जिससे रसूले इस्लाम[स०] की बेदाग़ सीरत की पुख़्तगी और उसूल परवरी का हलका सा अन्दाज़ा किया जा सकता है। *''ऐ रसूल काफ़िरों से कह दीजिए कि जिसकी तुम इबादत करते हो उसकी मैं इबादत नहीं करता और जिसकी मैं इबादत करता हूँ उसकी तुम इबादत नहीं करते और जिनको तुम पूजते हो, उनको मैं कभी पूजने का नहीं और जिसकी मैं इबादत करता हूँ उसकी तुम इबादत करने वाले नहीं। तुम्हारे लिए तुम्हारा दीन है, और मेरे लिए मेरा दीन।''* (पारह 30 सूरए काफ़िरून)

यह सूरह उस वक़्त नाज़िल हुआ जब काफ़िरों ने इस्लाम को बढ़ते हुए देखा और उसकी तरक़्क़ी पर नज़र की तो सोचे कि क्यों न रसूल[स०] से एक समझौता कर लिया जाए जिसमें अपनी इज़्ज़त भी बाक़ी रहे और फिर इस्लाम से जुड़ भी जाएं यह सोचकर वह रसूल[स०] के पास आए और कहा कि आइये हम और आप एक समझौता कर लें एक साल या कुछ दिन आप हमारे ख़ुदाओं की इबादत कर लीजिये फिर हम एक ख़ुदा की इबादत करें। जब रसूल[स०] इस पर राज़ी न हुए तो उन लोगों ने कहा कि अच्छा एक दिन सिर्फ़ आप हमारे बुतों की पूजा कर लीजिये उसके बाद फिर हम ज़िन्दगी भर आपके ख़ुदा की इबादत करते रहेंगे। इस सूरह में इस पेशकश का जवाब दिया गया।

अगर ज़ाहिरी और सतही तौर पर ग़ौर किया जाए तो सियासी एतेबार से अगर रसूल[स०] सिर्फ़ एक दिन के लिए (अल्लाह की पनाह) बुतों की पूजा कर लेते तो एक बड़ी जमाअत इस्लाम में दाख़िल हो सकती थी और जमाअत भी वह जमाअत जो बार-बार रसूले इस्लाम[स०] को तरह-तरह से तकलीफ़ें और अज़ियतें पहुँचाया करती थी। इस्लामी तबलीग़ और इस्लामी क़ानूनों की तरह-तरह से जड़ काटने की कोशिश किया करती थी जिससे बहरहाल तबलीग़ में एक बड़ी रुकावट पड़ जाती थी।

लेकिन अगर ग़ौर किया जाए तो जाहिल काफ़िरों की यह बहुत गहरी सियासी चाल थी अगर रसूले इस्लाम[स०] उनके कहने से मान लीजिए अमल कर भी लेते तो पूरे इस्लामी निज़ाम की शक्ल ही बदल जाती हक़ीक़त में काफ़िर लोग इस्लाम के सबसे बड़े उसूल को तुड़वाना चाहते थे और एक नया उसूल मनवाना चाहते थे।

इस्लाम ने अगर सबसे पहले जिस उसूल की तबलीग़ की वह तौहीद ही तो था एक ख़ुदा की इबादत की तरफ़ दावत ही तो थी। अगर रसूले इस्लाम[स०] एक लम्हे के लिए भी (ख़ुदा की पनाह) काफ़िरों की बात मान लेते तो इस्लाम का सबसे पहला उसूल और अहम उसूल, यानी यह कि इबादत सिर्फ़ ख़ुदा-ए-वाहिद ही की हो सकती है ग़ैरे ख़ुदा की इबादत नहीं हो सकती, टूट जाता और फिर मक़सद कभी हासिल ही न हो सकता था क्योंकि फिर तो काफ़िरों के पास इस्लाम की रद्द में यह एक बड़ी दलील हो जाती कि ग़ैरे ख़ुदा की इबादत की जा सकती है इसलिए जब ग़ैरे ख़ुदा की इबादत हो सकती है तो फिर हम उनको क्यों छोड़ें जिनको सैकड़ों साल से हमारे बाप-दादा पूजते आ रहे हैं। इसलिए इस्लाम का सबसे पहला और आख़िरी अहम उसूल टूट जाता इस बुनियाद पर रसूले इस्लाम[स०] ने साफ़-साफ़ इन्कार करके अपने उसूल का बचाव किया। यही उसूल परवरी क़ानून के मुहाफ़िज़ की ज़िन्दगी में अहम चीज़ है जिसमें पैग़म्बरे इस्लाम[स०] कमाल की आख़िरी मन्ज़िल पर नज़र आते हैं।

⌘⌘⌘

(बक़िया......... फ़ुरू-ए-दीन) हैं और एक दूसरे से लेनदेन करते हैं। फ़ुक़हा और उलमा दीन और फ़िक़्ह के मसाएल पर, साइंसदाँ साईंस की नयी तरक़्क़ियों पर, अदीब अदबियात पर, महाजन लोग मालियात पर और माहिरीने सियासत क़ौमी और बैनुलअक़वामी सियासत पर बहस करते हैं। हज की रस्म मुसलमानों के लिए सिर्फ़ एक पाक फ़रीज़ा ही नहीं है बल्कि मजलिसे अक़वाम, बैनुलअक़वामी इदार-ए-उलूम व फ़ुनून और बैनुलमअक़वामी ऐवाने तिजारत भी है।''

ऊपर दी गई लाइनों में हज के हवाले से जो कुछ बयान किया गया है वह असल में हज़रत अली[अ०] के इस ख़ुतबे का मतलब है:

''ख़ुदा ने तुम पर अपने पाक घर का हज फ़र्ज़ कर दिया, वह घर जिसको उसने लोगों के लिए क़िब्ला करार दिया है, वह वहाँ इस तरह आते हैं जैसे जानवर (घाट पर) और इस शौक़ के साथ उस पर टूटते हैं जैसे जंगली कबूतरों की (टुकड़ी ग़ल्ले पर)। इस हज को ख़ुदा ने बन्दों की उस इन्केसारी का निशान और उस यक़ीन की अलामत क़रार दिया है जो उसकी अज़मत और इज़्ज़त के लिए उनके दिल में है, उसने अपनी मख़लूक़ में से अपनी (आवाज़) सुनने वाले चुन लिये, उन लोगों ने उसकी दावत पर लब्बैक कहा और उसके क़ौल के लिए खड़े हुए जहाँ उसके नबी खड़े होते थे, और (नज़्म व तरतीब के लेहाज़ से) उन फ़रिश्तों से मिलते जुलते नज़र आए जो ख़ुदा के अर्श का तवाफ़ करते हैं, यह लोग तिजारतगाहे इबादत में फ़ायदा हासिल कर रहे हैं। और उसके वादे की जगह मग़फ़िरत जल्दी-जल्दी आगे बढ़ रहे हैं। अल्लाह सुब्हानहू तआला ने इस घर को इस्लाम की निशानी और पनाह लेने वालों के लिए अम्न की जगह क़रार दिया है। उसने वहाँ हज अदा करना फ़र्ज़ किया है, और उसके हक़ को वाजिब कर दिया और उसकी ज़ियारत लाज़मी क़रार दे दी। चुनान्चे इरशाद होता है *''ख़ुदा की तरफ से उन लोगों पर अल्लाह के घर का हज वाजिब होता है जो वहाँ जाने की ताक़त रखते हैं। जो शख़्स हज से इन्कार करे तो (याद रखिये) कि ख़ुदा सारी दुनिया से बेपरवा है।''*

⌘⌘⌘